दानम्मा उर्फ सुमन सुरपुर एवं अन्य

बनाम

अमर और अन्य

फरवरी 01, 2018

[ए 0 के0 सीकरी और अशोक भूषण, न्यायमूर्तिगण]

हिंदू उत्तराधिकार (संशोधन) अधिनियम, 2005 – धारा 6 – प्रयोज्यता – एक (जीएस) की 2001 में मृत्यु हो गई और वह अपने पीछे अपनी विधवा, दो बेटियों (अपीलार्थीगण) और (एके) सहित दो बेटे को छोड़ गए – प्रतिवादी क्र.–1 (एके का बेटा) द्वारा विभाजन के लिए मुकदमा दायर किया गया, विचारण न्यायालय द्वारा फैसला सुनाया गया कि अपीलार्थीगण किसी भी हिस्से के हकदार नहीं थे क्योंकि वे 1956 अधिनियम के अधिनियमन से पहले पैदा हुए थे, हाई कोर्ट ने अपीलार्थीगणओं द्वारा दायर अपील निरस्त की, इसके खिलाफ समीक्षा याचिका भी निरस्त अभिनिर्धारित किया गया । संशोधित रूप में धारा 6 यह निर्धारित करती है कि सहदायिक व्यक्ति की पुत्री, पुत्र के समान ही जनम से सहदायिक बन जाती है – संशोधन अधिनियम, 2005 सहदायिक की बेटी पर भी पुत्र के समान ही समान सहदायिक संपत्ति में अधिकार और दायित्व प्रदान करता है। वर्तमान मामले में, विभाजन के लिए मुकदमा 2002 में दायर किया गया हालाँकि लंबित रहने के दौरान मुकदमे की धारा 6 में संशोधन किया गया था । र्विचारण न्यायालय द्वारा वष 2007 में डिक्री पारित की गई थी । इस प्रकार, अपीलार्थीगणओं के अधिकार स्पष्ट हो गए वर्ष 2005 वर्तमान मामले में, विभाजन का विषय मुकदमा संयुक्त परिवार की संपत्ति थी, इस प्रकार, उक्त विभाजन मुकदमे में, हिस्सा अपीलार्थीगणओं को भी हस्तांतरित किया जाएगा । चूंकि, 'जीएस' की मृत्यु हो गई अपीलार्थीगणओं के पीछे, दो बेटे और एक विधवा, दोनों अपीलार्थीगण होंगे प्रत्येक संपत्ति में 1/5 वें हिस्से का हकदार होगा । चूंकि, 'एके' के पास 1/5 हिस्सा होगा, इसलिए विभाजन मे इसे पांच शेयरों में विभाजित किया जाएगा यानी 'एके', उसकी पत्नी प्रतिवादी क्र.– 2, उसकी दो बेटियां प्रतिवादी नंबर 3 और 4 एवं बेटा वादी / प्रतिवादी क्र.– 1 (उत्तरवादी क्र. – 1) के बीच । इस प्रकार वादी/प्रतिवादी क्र.– 1 संपत्ति में 1/25 वें हिस्से का हकदार होगा – हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 ।

मुकदमा, – विभाजन का मुक़दमा– प्रारंभिक डिक्री का प्रभाव – संशोधित धारा 6 के अनुसार सहदायिक संपत्ति में बेटियों के अधिकार – अभिनिर्धारित किया गया । संशोधित धारा 6 के अनुसार सहदायिक संपत्ति में बेटियों के अधिकार केवल इसलिए खतम नहीं होता क्योंकि विभाजन के मुकदमे में प्रारंभिक डिक्री पारित कर दी गई है । विभाजन के मुकदमों में, विभाजन केवल अंतिम डिक्री के पारित होने पर ही अंतिम होता है । जहां ऐसी स्थिति उत्पन्न होती है, प्रारंभिक डिक्री को ध्यान में रखते हुए संशोधन करना होगा । 2005 के संशोधन द्वारा कानून में बदलाव हिंदू उत्तराधिकार (संशोधन) अधिनियम, 2005 – धारा 6

न्यायालय ने अपील स्वीकार करते हुए अभिनिर्धारित किया हैः 1.1 धारा 6, हिंदू उत्तराधिकार में संशोधन अधिनियम, 1956 संशोधन अधिनियम, 2005 के माध्यम से इस मुद्दे को बिना किसी संदेह के अपीलार्थीगण के पक्ष में स्पष्ट करता है । यह संशोधन अब सहदायिक की पुत्री को उसके अपने अधिकार में सहदायिक का दर्जा उसी प्रकार प्रदान करता है जैसा एक पुत्र का होता है, एवं उसको सहदायिक संपत्ति में समान अधिकार और देनदारिया उसी प्रकार प्रदान करता है यदि वह एक पुत्र होती। [पैरा 20] [564–बी]

1.2 मिताक्षरा कानून द्वारा शासित संयुक्त हिंदू परिवार से संबंधित कानून में अभूतपूर्व परिवर्तन हुए हैं। निकटतम महिला रिश्तेदारों, अर्थात् सहदायिक की बेटियों के साथ समान व्यवहार की बढ़ती आवश्यकता को संबोधित करने के लिए उक्त परिवर्तन सामने लाए गए हैं। इस धारा में कहा गया है कि बेटी अपने जन्म से ही

सहदायिक होगी और उसके पास बेटे के समान ही अधिकार और दायित्व होंगे। बेटी उस संपत्ति को सहदायिक संपत्ति के रूप में धारण करेगी जिसकी वह हकदार है, जिसे उसके द्वारा वसीयत या किसी अन्य वसीयतनामा अंतरण निपटाने में सक्षम संपत्ति के रूप में माना जाएगा। ये परिवर्तन समानता की कसौटी पर किए जाने की मांग की गई है, इस प्रकार उस कथित निर्योग्यता और पूर्वाग्रह को दूर करने की कोशिश की गई है जिसका एक बेटी को सामना करना पड़ता था। 2005 में हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 में संशोधन करके इसमें जो मूलभूत परिवर्तन लाए गए, वे संभवतः रोसको पाउंड के उन अमिट शब्दों की अनुभूति हैं, जो उनके प्रख्यात ग्रन्थ जैसा कि उनकी प्रसिद्ध ग्रन्थ, आइडियल एलीमेंट इन लॉ में विद्यमान है, कि कानून स्थिर होना चाहिए और फिर भी यह स्थिर नहीं रह सकता। इसलिए कानून के बारे में सोचने वाले सभी लोगों ने स्थिरता की आवश्यकता और परिवर्तन की आवश्यकता की परस्पर विरोधी मांगों को सुलझाने के लिए संघर्ष किया है। [पैरा 23] [569–डी–जी]

प्रकाश एवं अन्य बनाम फुलावती और अन्य **(2016) 2 एससीसी 36 – पर भरोसा**।

सदाशिव सखाराम पाटिल बनाम चंद्रकांत गोपाल देसले **2011 (5) बाम्बे सीआर 726**; बद्रीनारायण शंकर भंडारी बनाम ओमप्रकाश शंकर भंडारी **एआईआर 2014 बाम्बे 151**; पर्वत चंद्र पटनायक बनाम शरत चंद्र पट्टनायक **एआईआर 2008 ओड़ीसा 133**; सुगलाबाई बनाम गुंडप्पा ए. मराडी **आईएलआर 2007 कर्नाटक 4790**; राखी गुप्ता बनाम जहूर अहमद **197 (2013) डीएलटी 154 – स्वीकृत**।

वैशाली सतीश गोनारकर बनाम सतीश केशोराव गोनारकर **एआईआर 2012 बाम्बे 110 – स्वीकृत नहीं**।
रोस्को पाउंड द्वारा ''द आइडियल एलीमेंट इन लॉ'' **संदर्भित**

1.3 धारा 6, जैसा कि संशोधित है, यह निर्धारित करती है कि संशोधित अधिनियम, 2005 के प्रारंभ से, एक सहदायिक की बेटी जन्म से ही बेटे की तरह ही अपने आप में एक सहदायिक बन जाएगी। यह स्पष्ट है कि पुरानी धारा और पुराने हिंदू कानून के तहत बेटों को जन्म से ही सहदायिक माना जाता था। संशोधित प्रावधान अब वैधानिक रूप से जन्म से ही बेटियों के भी सहदायिक के अधिकारों को मान्यता देता है। यह अनुभाग पुत्र के समान ही शब्दों का प्रयोग करता है। इसलिए यह स्पष्ट होना चाहिए कि सहदायिक के बेटे और बेटियों दोनों को जन्म से सहदायिक बनने का अधिकार दिया गया है। सहदायिक में जन्म का तथ्य ही सहदायिक का निर्माण करता है, इसलिए सहदायिक के बेटे और बेटियां जन्म के आधार पर सहदायिक बन जाते हैं। सहदायिक संपत्ति का हस्तांतरण बाद का चरण है और सहदायिक की मृत्यु का परिणाम है। जैसा कि ऊपर बताया गया है, सहदायिकता का पहला चरण स्पष्ट रूप से इसका निर्माण है, और जैसा कि अच्छी तरह से मान्यता प्राप्त है। सहदायिकता की घटनाओं में से एक सहदायिक का दर्जा विच्छेद की मांग करने का अधिकार है। इसलिए, सहदायिकों के अधिकार जन्म से (अब बेटियों सहित) उत्पन्न होते हैं और प्रवाहित होते हैं, जैसा कि उप–एस (1) (ए) और (बी) से स्पष्ट है। विभाजन का अधिकार निरस्त नहीं किया गया है। यह अधिकार अंतर्निहित है और कोई भी सहदायिक इसका लाभ उठा सकता है, यहां तक कि एक बेटी भी जो सहदायिक है। [पैरा 24, 26] [569–एच; 570–ए–सी; 571–ए]

भारतीय स्टेट बैंक बनाम घमंडी राम **एआईआर 1969 एससी 1330: [1969] 3 एससीआर 51 – संदर्भित**।

1.4 वर्तमान मामले में, निस्संदेह, विभाजन का मुकदमा वर्ष 2002 में दायर किया गया था। हालाँकि, इस मुकदमे के लंबित रहने के दौरान, अधिनियम की धारा 6 में संशोधन किया गया था जबकि विचारण न्यायालय द्वारा वर्ष 2007 में ही डिक्री पारित की गई थी। इस प्रकार, अपीलार्थीगणओं के अधिकार वर्ष 2005 में स्पष्ट हो गए और इस घटना को विचारण न्यायालय के साथ–साथ उच्च न्यायालय द्वारा भी ध्यान में रखा जाना

चाहिए था। इस न्यायालय ने गंडुरी कोटेश्वरम्मा एवं अन्य बनाम चकिरी यानादी और अन्य (2011) 9 एससीसी 788 में यह अभिनिर्धारित किया है कि संशोधित धारा 6 के अनुसार सहदायिक संपत्ति में बेटियों के अधिकार केवल इसलिए नहीं खो गए हैं क्योंकि विभाजन के मुकदमे में प्रारंभिक डिक्री पारित कर दी गई है। जहां तक विभाजन के मुकदमों का प्रश्न है, अंतिम डिक्री पारित होने पर ही विभाजन अंतिम होता है। जहां ऐसी स्थिति उत्पन्न होती है, वहां 2005 के संशोधन द्वारा कानून में बदलाव को ध्यान में रखते हुए प्रारंभिक डिक्री में संशोधन करना होगा। तथ्यों के आधार पर, इसमें कोई विवाद नहीं है कि जो संपत्ति विभाजन के मुकदमे का विषय थी, वह संयुक्त परिवार की है और गुरुलिंगप्पा सावदी उक्त संयुक्त परिवार की संपत्ति के प्रस्तावक थे। हमारी उपरोक्त चर्चा के मद्देनजर, उक्त विभाजन मुकदमे में, हिस्सा अपीलार्थीगण को भी हस्तांतरित किया जाएगा। चूंकि, सावदी मृत्यु पश्चात् अपने पीछे दो बेटों, दो बेटियों और एक विधवा को छोड़ गये इसलिए, दोनों अपीलार्थीगण उक्त संपत्ति में 1/5 वें (हिस्से के हकदार होंगे। वादी (प्रतिवादी क्रमांक–1) अरुण कुमार (प्रतिवादी संख्या 1) का पुत्र है। चूंकि, अरुण कुमार के पास 1/5 हिस्सा होगा, इसलिए इसे विभाजन पर पांच शेयरों में विभाजित किया जाएगा यानी प्रतिवादी नंबर 1 अरुण कुमार, उनकी पत्नी प्रतिवादी नंबर 2, उनकी दो बेटियां प्रतिवादी नंबर 3 और 4 और बेटे/वादी के बीच। (प्रतिवादी नंबर 1) इस प्रकार वादी/प्रतिवादी क्र.–1 संपत्ति में 1/25 वें हिस्से का हकदार होगा। [पैरा 27,28] [571–बी–एफ]

गंडुरी कोटेश्वरम्मा और अन्य विरूद्ध चकिरी यानाडी और अन्य **(2011) 9 एससीसी 788: [2011] 12 एससीआर 968 – पर भरोसा** ।

अनार देवी एवं अन्य। बनाम परमेश्वरी देवी और अन्य **(2006) 8 एससीसी 656: [2006] 6 पूरक। एससीआर 370 – संदर्भित** ।

मुल्ला, हिंदू कानून के सिद्धांत **17 वां संस्करण, खंड द्वितीय पृष्ठ 250 – संदर्भित।**

केस कानून संदर्भ

[2006] 6 पूरक। एससीआर 370	संदर्भित	पैरा 17
एआईआर 2012 **बाम्बे** 110	अनुमोदित नहीं	पैरा 21
2011 (5) **बाम्बे** सीआर 726	अनुमोदित	पैरा 21
एआईआर 2014 **बाम्बे** 151	अनुमोदित	पैरा 21
एआईआर 2008 ओड़ीसा 133	अनुमोदित	पैरा 21
आईएलआर 2007 कर्नाटक 4790	अनुमोदित	पैरा 21
197 (2013) डीएलटी 154	अनुमोदित	पैरा 21
(2016) 2 एससीसी 36	पर निर्भर	पैरा 22
[1969] 3 एससीआर 51	संदर्भित	पैरा 25
[2011] 12 एससीआर 968	पर निर्भर	पैरा 27

सिविल अपीलीय क्षेत्राधिकार: सिविल अपील क्रमांक–1 2018 की 188–189.

उच्च न्यायालय की कर्नाटक, धारवाड़ में सर्किट बेंच के आर.एफ.ए. 2008 की संख्या 322 (पीएआर) और अंतिम आदेश दिनांक 18.10.2012 आर.पी. 2012 की संख्या 1533 आर.एफ.ए. 2008 की संख्या 322 (पीएआर) में दिनांक 25.01.2012 के निर्णय एवं आदेश से

एस.एन.भट, अधिवक्ता अपीलार्थीगण के लिए ।

एच. चन्द्रशेखर, अधिवक्ता उत्तरवादीगण के लिए ।
न्यायालय का निर्णय सुनाया गया ।

ए.के. सीकरी, जे. यहां अपीलार्थीगण, संख्या में दो, एक हिंदू संयुक्त परिवार के पूर्वज गुरुलिंगप्पा सावदी की बेटियां हैं । इन दो बेटियों के अलावा, उनके दो बेटे अरुणकुमार और विजय थे। गुरुलिंगप्पा सावदी की वर्ष 2001 में मृत्यु हो गई। वह अपने पीछे उपरोक्त दो बेटियों, दो बेटों और अपनी विधवा सुमित्रा को छोड़ गए। उनकी मृत्यु के बाद, अमर पुत्र अरुणकुमार ने वादपत्र में अनुसूची बी से ई में वर्णित संपत्ति के विभाजन और एक अलग कब्जे के लिए मुकदमा दायर किया, जिसमें कथन किया, गया कि सहदायिक के रूप में दोनों बेटे और विधवा उपरोक्त संपत्तियों के संयुक्त कब्जे में थे और अनुसूची बी में उल्लिखित संपत्ति गुरुलिंगप्पा सावदी के नाम पर संयुक्त परिवार के केंद्र से अर्जित की गई थी। उनके द्वारा प्रस्तुत मामला यह था कि यहां अपीलार्थीगण उक्त संयुक्त परिवार में सहदायिक नहीं थे क्योंकि उनका जन्म हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 (इसके बाद 'अधिनियम' के रूप में संदर्भित) के अधिनियमन से पहले हुआ था। यह भी अभिवचन किया गया कि वे विवाहित बेटियाँ थीं और शादी के समय उन्होंने सोना, एवं राशि प्राप्त कर अपना हिस्सा छोड़ दिया था।

2) यहां अपीलार्थीगणओं ने यह दावा करते हुए मुकदमे का विरोध किया कि बेटियां होने के नाते और 1950 के अधिनियम के लागू होने के बाद गुरुलिंगप्पा सावदी की मृत्यु होने के कारण वे भी संयुक्त परिवार की संपत्तियों में हिस्सा पाने की हकदार थीं।

3) विचारण न्यायालय ने मुकदमे पर फैसला सुनाते हुए कहा कि अपीलार्थीगण किसी भी हिस्से के हकदार नहीं थे क्योंकि वे अधिनियम के अधिनियमन से पहले पैदा हुए थे और इसलिए उन्हें सहदायिक नहीं माना जा सकता था। विचारण न्यायालय ने वैकल्पिक तर्क को भी खारिज कर दिया कि अपीलार्थीगणओं ने 2005 के संशोधन अधिनियम के माध्यम से अधिनियम में संशोधन के बाद उक्त संपत्तियों में हिस्सेदारी प्राप्त की थी। उच्च न्यायालय ने 25 जनवरी 2012 के आक्षेपित निर्णय द्वारा विचारण न्यायालय के इस दृष्टिकोण को बरकरार रखा है एवं विभाजन के लिए दायर मुकदमे में पारित 09 अगस्त 2007 की डिक्री की पुष्टि की।

4) उपरोक्त पृष्ठभूमि में, इस अपील में विचार के लिए कानून का प्रश्न यह है कि क्या अपीलार्थीण गुरुलिंगप्पा सावदी की बेटियों को इस आधार पर उनके हिस्से से वंचित किया जा सकता है कि उनका जन्म अधिनियम के अधिनियमन से पहले हुआ था एवं क्या उन्हें इसलिए, सहदायिक के रूप में नहीं माना जा सकता है ? वैकल्पिक प्रश्न यह है कि क्या, हिंदू उत्तराधिकार (संशोधन) अधिनियम, 2005 के पारित होने के साथ, अपीलार्थीगण ''पुत्र के समान'' अपने अधिकार में ''जन्म से'' सहदायिक बन जाएंगे, एवं क्या इसलिए, पुत्र के समान बराबर हिस्सा प्राप्ति के हकदार हैं ?

5) यद्यपि, हमने इस मामले में शामिल मामले के सार का उल्लेख संक्षिप्त तथ्यात्मक पृष्ठभूमि के साथ किया है जिसमें यह प्रश्न उत्पन्न हुआ है, कुछ और तथ्य जो शामिल मुद्दे की उत्पत्ति को समझने के लिए आवश्यक हो सकते हैं, उन्हें भी दोहराया जा सकता है। हम पार्टियों की वंशावली से शुरुआत कर सकते हैं, यह इस प्रकार है:

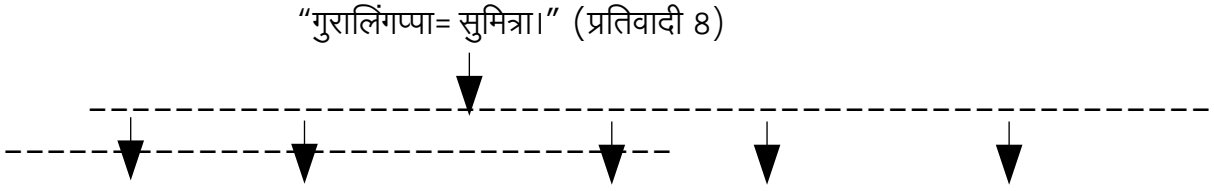

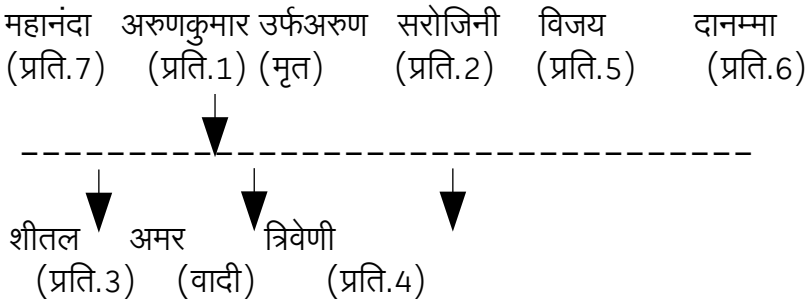

6) इसमें उत्तरवादी क्रमांक–1 (वादी) ने 01 जुलाई 2002 को वाद अनुसूची संपत्तियों में 1/15 वें हिस्से का दावा करते हुए मुकदमा दायर किया। उक्त मुकदमे में उन्होंने उन संपत्तियों का उल्लेख किया जिनका बँटवारा आवश्यक था।

7) वादपत्र की अनुसूची सी में संयुक्त परिवार से संबंधित घर की संपत्तियॉ उल्लेखित हैं। वादपत्र की अनुसूची डी में संयुक्त परिवार से संबंधित दुकान की संपत्तियां उल्लेखित हैं। वादपत्र की अनुसूची ई में संयुक्त परिवार की मशीनरी और चल संपत्ति उल्लेखित है। वादी ने कथन किया है कि वादपत्र की अनुसूची की संपत्तियां संयुक्त परिवार की थीं और प्रतिवादी नं. 1 वादी के पिता, वादी और उसके भाई–बहनों की उपेक्षा कर रहे थे इसलिए वाद अनुसूची संपत्तियों के बंटवारे की मांग की गई है। वादी ने तर्क दिया कि सभी वाद अनुसूची की संपत्तियां संयुक्त परिवार की संपत्तियां थीं। वादी ने वादपत्र के पैरा 5 में तर्क दिया कि प्रस्तावक गुरलिंगप्पा की मृत्यु मुकदमा दायर करने से 1 वर्ष पहले हो गई थी। वादपत्र के पैरा 7 में वादी ने तर्क दिया कि प्रतिवादी सं. 1 के पास 1/3 हिस्सा था और प्रतिवादी नं. 5 और 8 में से प्रत्येक के पास वाद अनुसूची संपत्तियों में 1/3 हिस्सा था। वादी ने यह भी तर्क दिया कि प्रतिवादी 6 और 7 का मुकदमा अनुसूची संपत्तियों में कोई हिस्सा नहीं था।

8) प्रतिवादी नं. 1 (वादी के पिता) और गुरलिंगप्पा सावदी के बेटे ने कोई जवाबदावा प्रस्तुत नहीं किया। प्रतिवादी सं. 2, 3 और 4 ने वादी के दावे का समर्थन करते हुए अपने अलग–अलग लिखित जवाबदावा प्रस्तुत किए है । प्रतिवादी क्र.–5 (यहाँ प्रतिवादी क्र.– 5 एवं गुरलिंगप्पा सावदी का पुत्र) ने मुकदमा में विरोद्ध किया । उन्होंने अन्य बातों के अलावा तर्क दिया कि गुरलिंगप्पा की मृत्यु के बाद प्रतिवादी क्र.–1, क्र.–5 एवं अन्य मध्य एक मौखिक विभाजन हुआ एवं उक्त बँटवारे में प्रतिवादी क्र. 1 को कुछ संपत्तियां आवंटित की गईं और प्रतिवादी नं. 5 को कुछ अन्य संपत्तियां आवंटित की गईं और प्रतिवादी नं. 8, गुरलिंगप्पा सावदी की पत्नी सुमित्रा को कुछ अन्य संपत्तियां आवंटित की गईं। प्रतिवादी क्र.–5 ने आगे तर्क दिया कि उक्त मौखिक बंटवारे में प्रतिवादीगण क्र.–6 और 7 को कोई संपत्ति आवंटित नहीं की गई थी।

9) प्रतिवादी नं. 5 ने आगे तर्क दिया कि संपत्तियों में से एक संपत्ति अर्थात् सीटीएस नंबर 774 और कुछ अन्य संपत्तियां संयुक्त परिवार की संपत्ति नहीं थीं।

10) अपीलार्थीगण ने दावा किया कि संपत्ति में वे भी अपने हिस्से के हकदार थे। वाद प्रशन विराचित एवं साक्ष्य दर्ज करने के बाद, विचारण न्यायालय ने 09 अगस्त, 2007 को अपने फैसले और डिक्री द्वारा अभिनिर्धारित किया कि सीटीएस नंबर 774 (वादी पत्र की अनुसूची सी में घर की संपत्तियों में से एक) को छोड़कर वाद पत्र की अनुसूची की संपत्तियां संयुक्त पारिवारिक संपत्ति थीं।

11) विचारण न्यायालय ने अभी निर्धारित किया कि वादी, प्रतिवादी क्र.–2 से 4 संयुक्त परिवार की संपत्तियों में 1/8 वें हिस्से के हकदार थे। विचारण न्यायालय ने आगे कहा कि मुकदमे के लंबित रहने के दौरान प्रतिवादी नं. 8 (गुरुलिंगप्पा सावदी की पत्नी) की बिना वसीयत मृत्यु हो गई इसलिए उसका हिस्सा

प्रतिवादी क्र.–1 से 5 के पक्ष में चला गया एवं इसलिए प्रतिवादी 1 एवं 2 और उक्त हिस्से 1/2 हिस्से के हकदार थे। विचारण न्यायालय ने निम्नलिखित आदेश पारित किया:

> "वादी के मुकदमे को डिक्री किया जाता है कि वाद पत्र की संपत्तियों में अनुसूची बी,सी, और डी (सीटीएस नंबर 774 को छोड़कर) एवं आयुक्त की रिपोर्ट में उल्लेखित मशीनरी के संबंध वादी 1/8 वें हिस्से के विभाजन और अलग कब्जे का हकदार है (आयुक्तों की रिपोर्ट प्रदशण पी16 जिसमें मशीनरी की सूची उल्लेखित है डिक्री का हिस्सा रहेगी ।
>
> प्रतिवादीगण क्र.–2 से 4 तक प्रत्येक प्रतिवादी 1/8 वें हिस्से का हकदार है और प्रतिवादी क्र.–5 उपरोक्त संपत्तियों में 4/8 हिस्से का हकदार है।

12) इस प्रकार विचारण न्यायालय ने अपीलार्थीगणण को कोई भी हिस्सा देने से इनकार कर दिया।

13) ट्रायल कोर्ट के उक्त निर्णय और डिक्री से व्यथित होकर, प्रतिवादी नं. 6 और 7 ने उच्च न्यायालय के समक्ष एक अपील आरएफए नंबर 322/2008 दायर की, जिसमें पूर्वज के बेटों, अर्थात् प्रतिवादी क्र.–1 से 5 के समान हिस्सेदारी की मांग की गई।

14) उच्च न्यायालय ने अपने आक्षेपित निर्णय और आदेश दिनांक 25 जनवरी 2012 द्वारा अपील को खारिज कर दिया। इसके बाद 04 मार्च 2012 को प्रतिवादी क्र.–6 और 7 ने उच्च न्यायालय के समक्ष एक समीक्षा याचिका क्र.–1533/2012 दायर की जिसका भी यही हश्र हुआ।

15) हमने पक्षों के विद्वान वकील को सुना है। अपीलार्थीगण के विद्वान वकील ने उच्च न्यायालय के समक्ष किये गये अपने तर्क दोहराऐ जो की ऊपर उल्लेखित हैं। उत्तरवादीण के विद्वान वकील ने उच्च न्यायालय द्वारा आक्षेपित निर्णय में दिए गए कारण पर भरोसा करते हुए उन प्रस्तुतियों का खंडन किया।

16) सबसे पहले, अधिनियम की धारा 6 के प्रावधानों पर ध्यान दें, जैसा कि यह संशोधन अधिनियम, 2005 द्वारा संशोधन से पहले था। यह प्रावधान इस प्रकार है:

> "6. सहदायिक संपत्ति में हित का हस्तांतरण.–जब इस अधिनियम के प्रारंभ होने के बाद एक हिंदू पुरुष की मृत्यु हो जाती है एवं उसकी मृत्यु के समय मिताक्षरा सहदायिक संपत्ति में उसका हित होता है तो संपत्ति में उसका हित जीवित बचे सहदायिक सदस्यों को हस्तांतरित हो जाएगा और इस अधिनियम के अनुसार नहीं:
>
> बशर्ते कि, यदि मृतक ने अनुसूची के वर्ग 1 में निर्दिष्ट किसी महिला रिश्तेदार या उस वर्ग में निर्दिष्ट किसी पुरुष रिश्तेदार को जीवित छोड़ दिया है, जो ऐसी महिला रिश्तेदार के माध्यम से दावा करता है, तो मिताक्षरा सहदायिक संपत्ति में मृतक का हित वसीयतनामा द्वारा हस्तांतरित होगा या निर्वसीयत उत्तराधिकार, जैसा भी मामला हो, इस अधिनियम के तहत होता है न कि उत्तरजीविता द्वारा,
>
> स्पष्टीकरण 1– इस धारा के प्रयोजनो के लिए एक हिंदू मिताक्षरा सहदायिक के हित को उस संपत्ति में हिस्सा माना जाएगा जो उसे आवंटित किया गया होता यदि संपत्ति का विभाजन उसकी मृत्यु से ठीक पहले हुआ होता, चाहे जो भी हो वह बंटवारे का दावा करने का हकदार है या नहीं।

स्पष्टीकरण 2– इस धारा के परंतुक में शामिल किसी भी बात का यह अर्थ नहीं लगाया जाएगा कि वह उस व्यक्ति को सक्षम बनाता है जिसने मृतक या उसके किसी उत्तराधिकारी की मृत्यु से पहले खुद को सहदायिक से अलग कर लिया था ताकि वह निर्वसीयत के आधार पर उसमें निर्दिष्ट हित में हिस्सेदारी का दावा कर सके,"

17) इसमें कोई संदेह नहीं है, उपरोक्त धारा के स्पष्टीकरण 1 में कहा गया है कि मृतक मिताक्षरा सहदायिक संपत्ति का हित उस संपत्ति में हिस्सा माना जाएगा जो उसे आवंटित किया गया होता यदि संपत्ति का विभाजन उसकी मृत्यु ठीक पहले हुआ होता, भले ही वह विभाजन का दावा करने का हकदार था या नहीं। यह स्पष्टीकरण अनार देवी एवं अन्य विरुद्ध वी. परमेश्वरी देवी एवं अन्य (2006) 8 एससीसी 656 मामले में इस न्यायालय के समक्ष व्याख्या के लिए आया था । न्यायालय ने, अनुमति के साथ, मुल्ला के आधिकारिक ग्रंथ, हिंदू कानून के सिद्धांत, 17 वां संस्करण, खंड 2 पृष्ठ 250 से निम्नलिखित अंश उद्धृत किया। जिसमें विद्वान लेखक ने धारा 6 के स्पष्टीकरण 1 की व्याख्या करते हुए निम्नलिखित टिप्पणियाँ कीं:

"स्पष्टीकरण 1 मिताक्षरा सहदायिक संपत्ति में मृतक के हित को परिभाषित करता है और विषय में एक काल्पनिक विभाजन की अवधारणा को शामिल करता है। यह ध्यान रखना आवश्यक है कि यह काल्पनिक विभाजन उत्तराधिकार और गणना को सक्षम करने के उद्देश्य से है, जो अन्यथा उत्तरजीविता द्वारा हस्तांतरित होने के लिए उत्तरदायी था और अनुसूची के वर्ग 1 में उल्लिखित रिश्तेदारों के उस हित में हिस्सो का पता लगाने के लिए है। मृतक सहदायिक के हित को ध्यान में रखते हुए सहदायिकता की अन्य घटनाओं को अबाधित छोड़ दिया जाता है और सहदायिकता बिना किसी व्यवधान के जारी रह सकती है। एक वैधानिक कल्पना, जो मामलों की एक काल्पनिक स्थिति को वास्तविक मानती है, के लिए आवश्यक है कि अनुमानित मामलों की स्थिति के परिणाम और घटनाएं उससे इस तरह प्रवाहित हों या उसके साथ हों जैसे कि मामलों की कथित स्थिति वास्तव में अस्तित्व में थी और उस स्थिति के बारे में प्रभाव अपरिहार्य परिणामों पर दिया जाना चाहिए।

7. विद्वान लेखक ने आगे कहा कि:
वह काल्पनिक विभाजन और उसके अपरिहार्य परिणामों और घटनाओं का संचालन केवल इस धारा के प्रयोजनों के लिए है, अर्थात्, सहदायिक संपत्ति में मृतक के हित का हस्तांतरण और यदि वास्तव में सभी जीवित सहदायिकों के बीच नियमित विभाजन और स्थिति का विच्छेद हुआ था तो इससे सहदायिकता में पूर्ण व्यवधान नहीं आएगा।

8. विद्वान लेखक के अनुसार, पृष्ठ 253–54 पर, मृतक सहदायिक के अविभाजित हित को
''परंतुक में निर्धारित नियम को प्रभावी करने के उद्देश्य से, जैसा कि पहले ही बताया गया है, उनकी मृत्यु की तिथि के अनुसार एक काल्पनिक विभाजन के आधार पर सुनिश्चित किया जाना है। उस हिस्से का निर्धारण उन व्यक्तियों की संख्या पर निर्भर होना चाहिए जो सहदायिक संपत्ति में हिस्सेदारी के हकदार होते यदि वास्तव में उसकी मृत्यु से ठीक पहले विभाजन हुआ होता और ऐसे व्यक्ति को संयुक्त परिवार और बंटवारा कानून के अनुसार सुनिश्चित करना होगां। इसलिए, सहदायिक की मृत्यु के समय लागू विषय पर हिंदू कानून के नियमों को उन व्यक्तियों के निर्धारण के प्रश्न को नियंत्रित करना चाहिए जो काल्पनिक विभाजन पर हिस्सेदारी के हकदार होंगे।"

18. इसके बाद न्यायालय ने कुछ निर्णयों का हवाला देकर वैधानिक कल्पना की व्याख्या करने के तरीके को स्पष्ट किया और स्थिति को इस प्रकार संक्षेप में प्रस्तुत किया:

''11. इस प्रकार हम अभिनिर्धारित करते हैं कि अधिनियम की धारा 6 के अनुसार, जब कोई सहदायिक अधिनियम की अनुसूची के वर्ग 1 में निर्दिष्ट किसी महिला रिश्तेदार को छोड़कर मर जाता है या उस वर्ग में निर्दिष्ट पुरुष रिश्तेदार ऐसी महिला रिश्तेदार के माध्यम से दावा करता है, तो मिताक्षरा सहदायिक में उसका अविभाजित हित संपत्ति जीवित सहदायिक को, उत्तरजीविता द्वारा नहीं, बल्कि निर्वसीयत उत्तराधिकार द्वारा उसके उत्तराधिकारियों को हस्तांतरित होगी। अधिनियम की धारा 6 का स्पष्टीकरण 1 एक तंत्र प्रदान करता है जिसके तहत एक मृत सहदायिक के अविभाजित हित की गणना की जा सकती है और यानी कि उस संपत्ति में एक हिंदू मिताक्षरा सहदायिक के हित का इतना हिस्सा माना जाएगा जो उनकी मृत्यु से ठीक पहले में उन्हें आवंटित किया गया होता यदि संपत्ति का बंटवारा हुआ होता भले ही वह बंटवारे का दावा करने के हकदार थे या नहीं। इसका मतलब है कि मृत सहदायिक के अविभाजित हित का पता लगाने के प्रयोजनों के लिए, उसकी मृत्यु से ठीक पहले एक काल्पनिक विभाजन मान लिया जाना चाहिए और वही हिस्सा उत्तराधिकार द्वारा उसके उत्तराधिकारियों को हस्तांतरित किया जाएगा, जिसमें स्पष्ट रूप से जीवित सहदायिक भी शामिल होगा, जो हस्तांतरण के अलावा उत्तराधिकार द्वारा मृतक का अविभाजित हित, सहदायिक संपत्ति में उसके अविभाजित हित का दावा करने का भी हकदार होगा, जो उसे काल्पनिक विभाजन में मिल सकता था।

19) यह मामला स्पष्ट रूप से उच्च न्यायालय द्वारा आक्षेपित निर्णय में अपनाए गए दृष्टिकोण को नकारता है।

20) इसके अलावा, हमारा विचार है कि संशोधन अधिनियम, 2005 के माध्यम से उपरोक्त धारा में संशोधन से मुद्दा बिना किसी संदेह के अपीलार्थीगणओं के पक्ष में आ जाता है। यह संशोधन अब सहदायिक की बेटी को भी बेटे की तरह ही अपने अधिकार में सहदायिक का दर्जा प्रदान करता है और सहदायिक संपत्तियों में वही अधिकार और देनदारियां देता है जो उसे पुत्र होने पर होती। संशोधित प्रावधान इस प्रकार है:

"6. सहदायिक संपत्ति में हित का हस्तांतरण–(1) हिंदू उत्तराधिकार (संशोधन) अधिनियम, 2005 (2005 का 39) के प्रारंभ से, मिताक्षरा कानून द्वारा शासित एक संयुक्त हिंदू परिवार में, सहदायिक की बेटी, –

(ए) जन्म से ही बेटे की तरह ही अपने आप में सहदायिक बन जाती है;

(बी) उसे सहदायिक संपत्ति में वही अधिकार होंगे जो उसके बेटे होने पर होते;

(सी) उक्त सहदायिक संपत्ति के संबंध में बेटे के समान दायित्वों के अधीन होगा, और हिंदू मिताक्षरा सहदायिक के किसी भी संदर्भ को सहदायिक की बेटी के संदर्भ में शामिल माना जाएगा:
बशर्ते कि इस उपधारा में शामिल कोई भी बात किसी भी अंतरण या विच्छेद को प्रभावित या अमान्य नहीं करेगी, जिसमें संपत्ति का कोई विभाजन या वसीयतनामा द्वारा अंतरण भी शामिल है, जो 20 दिसंबर, 2004 से पहले हुआ था।

(2) कोई भी संपत्ति जिसमें उपधारा (1) के आधार पर एक महिला हिंदू हकदार होती है, उसके द्वारा सहदायिक स्वामित्व की घटना के साथ धारण की जायेगी और इस अधिनियम या उस समय के किसी अन्य कानून में निहित किसी तथ्य के होते हुऐ, भी वसीयती विन्यास द्वारा उसके द्वारा व्ययन करने योग्य संपत्ति मानी जायेगी।

(3) जहां हिंदू उत्तराधिकार (संशोधन) अधिनियम, 2005 (2005 का 39) के प्रारंभ होने के बाद एक हिंदू की मृत्यु हो जाती है, मिताक्षरा कानून द्वारा शासित संयुक्त हिंदू परिवार की संपत्ति में उसका हित वसीयतनामा या निर्वसीयत उत्तराधिकार जैसा भी मामला हो द्वारा हस्तांतरित होगा, इस अधिनियम के तहत जीवित रहने से नहीं, और सहदायिक संपत्ति को विभाजित माना जाएगा जैसे कि विभाजन हुआ हो और–

(ए) बेटी को उतना ही हिस्सा आवंटित किया जायेगी जितना बेटे को आवंटित किया जायेगी।

(बी) पूर्व–मृत पुत्र या पूर्व–मृत पुत्री का हिस्सा, जैसा कि उन्हें विभाजन के समय जीवित रहने पर मिलता, ऐसे पूर्व–मृत पुत्र या ऐसे पूर्व मृतक पुत्री के जीवित बच्चे को आवंटित किया जाएगा ।

(सी) पूर्व–मृत बेटे या पूर्व–मृत बेटी के पूर्व–मृत बच्चे का हिस्सा, जैसा कि ऐसे बच्चे को मिलता अगर वह विभाजन के समय जीवित होता, पूर्व मृत पुत्र या पूर्व मृत पुत्र जैसा भी मामला हो के पूर्व मृत संतान की संतान को आबंटित किया जायेगी ।

स्पष्टीकरण.– इस उप–धारा के प्रयोजनों के लिए, एक हिंदू मिताक्षरा सहदायिक का हित उस संपत्ति में हिस्सा माना जाएगा जो उसे आवंटित किया गया होता यदि संपत्ति का विभाजन उसकी मृत्यु से ठीक पहले हुआ होता, भले ही वह बँटवारे का दावा करने का हकदार था या नहीं।

(4) हिंदू उत्तराधिकार (संशोधन) अधिनियम, 2005 (2005 का 39) के लागू होने के बाद, कोई भी अदालत अपने पिता से देय किसी भी ऋण की वसूली के लिए बेटे, पोते या परपोते के खिलाफ मुकदमा चलाने के किसी भी अधिकार को केवल हिंदू कानून के तहत दादा या परदादा, ऐसे बेटे, पोते या परपोते को ऐसे किसी भी ऋण का भुगतान करने के लिए पवित्र दायित्व के आधार पर मान्यता नहीं देगी:

बशर्ते कि हिंदू उत्तराधिकार (संशोधन) अधिनियम, 2005 (2005 का 39) के प्रारंभ होने से पहले अनुबंधित किसी भी ऋण के मामले में, इस उप–धारा में शामिल कुछ भी प्रभावित नहीं करेगा—

(ए) किसी भी लेनदार का, जैसा भी मामला हो, बेटे, पोते या परपोते के खिलाफ कार्रवाई करने का अधिकार; या

(बी) ऐसे किसी भी ऋण के संबंध में या उसकी संतुष्टि में किया गया कोई भी अंतरण, और ऐसा कोई भी अधिकार या अंतरण पवित्र दायित्व के नियम के तहत उसी तरीके से और उसी सीमा तक प्रवर्तनीय होगा जैसे कि यह लागू करने योग्य होता। हिंदू उत्तराधिकार (संशोधन) अधिनियम, 2005 (2005 का 39) अधिनियमित नहीं किया गया था।

स्पष्टीकरण.– खंड (ए) के प्रयोजनों के लिए, अभिव्यक्ति ''बेटा'', ''पोता'' या ''परपोता'' को, जैसा भी मामला हो, बेटे, पोते या परपोते को संदर्भित करने के लिए समझा जाएगा, जो था हिंदू उत्तराधिकार (संशोधन) अधिनियम, 2005 (2005 का 39) के प्रारंभ होने से पहले जन्मे या गोद लिए गए ।

(5) इस धारा में निहित; कोई भी बात उस विभाजन पर लागू नहीं होगी, जो 20 दिसंबर, 2004 से पहले प्रभावी हो चुका है।

स्पष्टीकरण.– इस धारा के प्रयोजनों के लिए ''विभाजन'' का अर्थ है पंजीकरण अधिनियम, 1908 (1908 का 16) के तहत विधिवत पंजीकृत विभाजन विलेख के निष्पादन द्वारा किया गया कोई भी विभाजन या किसी न्यायालय की डिक्री द्वारा किया गया विभाजन ।''

21) इस संशोधन का प्रभाव विभिन्न उच्च न्यायालयों द्वारा घोषणाओं का विषय रहा है, विशेष रूप से, यह मुद्दा कि क्या यह अधिकार केवल उन बेटियों को प्रदान किया जाएगा जो 9 सितंबर, 2005 के बाद पैदा हुई हैं जब अधिनियम लागू हुआ था या उन बेटियों को भी जो पहले पैदा हुई थीं । **वैशाली सतीश गोनारकर बनाम सतीश केशोराव गोनारकर** एआईआर 2012 **बाम्बे** 110 मामले में बॉम्बे हाई कोर्ट ने यह विचार रखा था कि यह प्रावधान संशोधन से पहले भी पैदा हुई सभी बेटियों पर लागू नहीं किया जा सकता है, क्योंकि विधायिका ने स्वयं उस पिछली तारीख को निर्दिष्ट किया था जिससे अधिनियम लागू होगा। यह दृष्टिकोण **सदाशिव सखाराम पाटिल बनाम चंद्रकांत गोपाल देसले** 2011 (5) **बाम्बे** सीआर 726 में उसी उच्च न्यायालय द्वारा अपनाए गए दृष्टिकोण के विपरीत था । मामला पूर्ण पीठ को भेजा गया और पूर्ण पीठ का फैसला **बद्रीनारायण शंकर भंडारी बनाम ओमप्रकाश शंकर भंडारी** एआईआर 2014 **बाम्बे** 151 मामले में बताया गया है । पूर्ण पीठ ने माना कि धारा 6 की उप–धारा (1) का खंड (ए) परिचालन में भविष्यात्मक होगा जबकि खंड (बी) और (सी) और उप–धारा (1) के अन्य भाग और साथ ही उप–धारा (2) संचालन में पूर्वव्यापी होगा। यह माना गया कि संशोधित धारा 6(2) 17 जून 1956 से पहले (वह तारीख जिस दिन **हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम** लागू हुआ था) या उसके बाद (17 जून, 1956 और 8 सितंबर, 2005) के बीच में पैदा हुई बेटियों पर लागू होती है, बशर्ते कि वे 9 सितंबर, 2005 यानी उस तारीख को जीवित हों जब संशोधित अधिनियम, 2005 लागू हुआ था। उड़ीसा, कर्नाटक और दिल्ली उच्च न्यायालय ने भी यही प्रभाव डाला है। (एआईआर 2008 ओड़ीसा 133: **प्रवत चंद्र पटनायक बनाम शरत चंद्र पटनायक**; आईएलआर 2007 कर्नाटक 4790: **सुगालाबाई बनाम गुंडप्पा ए मराडी** और 197 (2013) डीएलटी 154: राखी गुप्ता बनाम जहूर अहमद (6)

22) **प्रकाश और अन्य बनाम फुलावती और अन्य** (2016) 2 एससीसी 366 के मामले में आधिकारिक घोषणा के साथ विवाद अब सुलझ गया है । जिसने उपरोक्त उच्च न्यायालयों के साथ–साथ बॉम्बे उच्च न्यायालय की पूर्ण पीठ द्वारा अपनाए गए दृष्टिकोण को मंजूरी दे दी है। उक्त निर्णय से निम्नलिखित चर्चा प्रासंगिक है:

> "17. संशोधन का पाठ स्वयं स्पष्ट रूप से घोषित करता है कि ''एक'' सहदायिक की ''बेटी'' को प्रदत्त अधिकार हिंदू उत्तराधिकार, (संशोधन) अधिनियम, 2005 के प्रारंभ से ही है। धारा 6(3) इसकी प्रयोज्यता के लिए संशोधन के बाद मृत्यु की बात करती है। कानून की स्पष्ट भाषा को देखते हुए, संशोधन के पाठ द्वारा सुझाई गई व्याख्या से भिन्न व्याख्या की कोई गुंजाइश नहीं है। किसी मूल प्रावधान में संशोधन हमेशा संभावित होता है जब तक कि यह स्पष्ट रूप से या आवश्यक इरादे से पूर्वव्यापी न हो। (श्याम सुंदर बनाम राम कुमार; (2001) 8 एससीसी 24, पैरा 22 से 27,) वर्तमान मामले में, संशोधित प्रावधान को पूर्वव्यापी प्रभाव देने के लिए न तो कोई स्पष्ट प्रावधान है और न ही उस आशय का कोई आवश्यक इरादा है। विभाजन के पंजीकृत होने की आवश्यकता, ऐसे विभाजन की प्रकृति को ध्यान में रखते हुए, जो कानून के संचालन द्वारा होता है, असंशोधित प्रावधान के अनुसार उत्तराधिकार के खुलने पर वैधानिक काल्पनिक विभाजन पर लागू नहीं हो सकता है। संशोधन के आशय और प्रभाव पर थोड़ी देर बाद विचार किया जाएगा। इस निष्कर्ष पर, उच्च न्यायालय का दृष्टिकोण बरकरार नहीं रखा जा सकता है।
>
> 18. उत्तरवादीगण का तर्क है कि संशोधन को सामाजिक कानून का एक अंश होने के कारण पूर्वव्यापी के रूप में पढ़ा जाना चाहिए स्वीकार नहीं किया जा सकता है। यहां तक कि किसी सामाजिक कानून को भी पूर्वव्यापी प्रभाव नहीं दिया जा सकता जब तक कि विधायिका द्वारा ऐसा प्रावधान न किया गया हो या ऐसा इरादा न किया गया हो। वर्तमान मामले में, विधायिका ने स्पष्ट रूप से संशोधन को इसके प्रारंभ से ही लागू किया है और केवल तभी लागू किया है जब विचाराधीन

सहदायिक की मृत्यु संशोधन के बाद हुई हो। इस प्रकार, क़ानून की व्यक्त भाषा को देखते हुए कोई अन्य व्याख्या संभव नहीं है। 20–12–2004 से पहले के अंतरण या अलगाव या विभाजन को अप्रभावित रखने वाले प्रावधान से यह निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता है कि बेटी अधिनियम के शुरू होने से पहले सहदायिक हो सकती है। परंतुक का मतलब केवल यह है कि इसमें शामिल नहीं किए गए लेनदेन सहदायिक संपत्ति की सीमा को प्रभावित नहीं करेंगे जो मुख्य प्रावधान लागू होने पर उपलब्ध हो सकती है। इसी प्रकार, स्पष्टीकरण को 20–12–2004 के बाद हुए विभाजन के लेन–देन तक सीमित रखकर धारा 6(5) के मूल प्रावधान के साथ सामंजस्यपूर्ण ढंग से पढ़ा जाना चाहिए । काल्पनिक विभाजन, अपनी प्रकृति से, या तो परंतुक के अंतर्गत, या उप–धारा (5) के अंतर्गत या स्पष्टीकरण के अंतर्गत शामिल नहीं है।

19. किसी प्रावधान की व्याख्या पाठ और संदर्भ पर निर्भर करती है। [आरबीआई बनाम पीयरलेस जनरल फाइनेंस एंड इन्वेस्टमेंट कंपनी लिमिटेड, (1987) 1 एससीसी 424, पी 450, पैरा 33] सामान्य नियम किसी क़ानून के शब्दों को सामान्य अर्थ में पढ़ना है। अस्पष्टता की स्थिति में तर्कसंगत अर्थ देना होगा। [केहर सिंह बनाम राज्य (दिल्ली प्रशासन), (1988) 3 एससीसी 609: 1988 एससीसी (सीआरआई) 711] स्पष्ट संघर्ष के मामले में, विधायिका के उद्देश्य और इरादे को आगे बढ़ाने के लिए सामंजस्यपूर्ण अर्थ दिया जाना चाहिए। [जिला खनन पदाधिकारी बनाम टिस्को, (2001) 7 एससीसी 358]

20. ऐसे कई अवसर आए हैं जब कोई परंतुक या स्पष्टीकरण व्याख्या के लिए आया। पाठ, संदर्भ और उद्देश्य के आधार पर व्याख्या के विभिन्न नियम लागू किए गए हैं। [एस. सुंदरम पिल्लई बनाम वीआर पट्टाभिरामन, (1985) 1 एससीसी 591]

21. सामान्य नियम यह है कि एक परंतुक अधिनियम से बाहर कुछ को छोड़ देता है जो अन्यथा अधिनियम के दायरे में होता, लेकिन यदि पाठ, संदर्भ या उद्देश्य की आवश्यकता होती है तो एक अलग नियम लागू हो सकता है। इसी प्रकार, एक स्पष्टीकरण का अर्थ अनुभाग के शब्दों के अर्थ को स्पष्ट करना है, लेकिन यदि भाषा या उद्देश्य की आवश्यकता है, तो स्पष्टीकरण की व्याख्या की जा सकती है। कानून की व्याख्या के नियम उपयोगी सेवक हैं लेकिन कठिन स्वामी हैं। [केशवजी रावजी एंड कंपनी बनाम सीआईटी, (1990) 2 एससीसी 231: 1990 एससीसी (टैक्स) 268] व्याख्या का उद्देश्य विधायिका के इरादे की खोज करना है।

22. इस पृष्ठभूमि में, हम पाते हैं कि धारा 6(1) और धारा 6 की उप–धारा (5) का प्रावधान स्पष्ट रूप से उसमें उल्लिखित लेनदेन को बाहर करने का इरादा रखता है जो 20–12–2004 से पहले हुआ हो सकता है, जिस तिथि पर विधेयक पेश किया गया था स्पष्टीकरण उन विभाजनों को फिर से खोलने की अनुमति नहीं दे सकता जो प्रभावी होने पर वैध थे। 20–12–2004 से पहले के लेनदेन को अंतिम रूप देने का उद्देश्य मुख्य प्रावधान को किसी भी तरह से पूर्वव्यापी बनाना नहीं है। उद्देश्य यह है कि फर्जी लेनदेन के माध्यम से विधेयक के शुरू होने पर उपलब्ध संपत्ति छीनी नहीं जाए और जब भी कानून द्वारा प्रदत्त अधिकार उपलब्ध हो और लागू किया जाना हो, तब भी वह उपलब्ध रहे। धारा 6(1) और (3) में संशोधन का मुख्य प्रावधान किसी भी तरह से प्रभावित करने का इरादा नहीं है बल्कि इस तरह से मजबूत किया गया है। अपीलार्थीगणओं द्वारा भरोसा किए गए ऐसे लेनदेन को नियंत्रित करने वाले स्थापित सिद्धांतों को 20–12–2004 से पहले की अवधि के लिए समाप्त करने का इरादा नहीं है। किसी भी मामले में 20–12–2004 के बाद भी वैधानिक काल्पनिक विभाजन को स्पष्टीकरण या प्रश्नगत प्रावधान द्वारा कवर नहीं किया जा सकता है।

23. तदनुसार, हमारा मानना है कि संशोधन के तहत अधिकार 9–9–2005 को जीवित सहदायिकों की जीवित बेटियों पर लागू होते हैं, भले ही ऐसी बेटियों का जन्म कब हुआ हो। विभाजन सहित स्वामित्व या अलगाव, जो उक्त तिथि से पहले लागू कानून के अनुसार 20–12–2004 से पहले हुआ हो, अप्रभावित रहेगा। इसके बाद विभाजन का कोई भी लेन–देन स्पष्टीकरण द्वारा शासित होगा।''

23) मिताक्षरा कानून द्वारा शासित संयुक्त हिंदू परिवार से संबंधित कानून में अभूतपूर्व परिवर्तन हुए हैं। निकटतम महिला रिश्तेदारों, अर्थात् सहदायिक की बेटियों के साथ समान व्यवहार की बढ़ती आवश्यकता को संबोधित करने के लिए उक्त परिवर्तन सामने लाए गए हैं। इस धारा में कहा गया है कि बेटी अपने जन्म से ही सहदायिक होगी और उसके पास बेटे के समान ही अधिकार और दायित्व होंगे। बेटी उस संपत्ति को सहदायिक संपत्ति के रूप में धारण करेगी जिसकी वह हकदार है, जिसे उसके द्वारा वसीयत या किसी अन्य वसीयतनामा अंतरण द्वारा निपटाने में सक्षम संपत्ति के रूप में माना जाएगा। ये परिवर्तन समानता की कसौटी पर किए जाने की मांग की गई है, इस प्रकार उस कथित निर्योग्यता और पूर्वाग्रह को दूर करने की कोशिश की गई है जिसका एक बेटी को सामना करना पड़ता था। 2005 में हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 में संशोधन करके इसमें जो मूलभूत परिवर्तन लाए गए, वे संभवतः रोसको पाउंड के उन अमिट शब्दों की अनुभूति हैं, जो उनके प्रख्यात ग्रन्थ जैसा कि उनकी प्रसिद्ध ग्रन्थ, द आइडियल एलीमेंट इन लॉ में विद्यमान है, कि कानून स्थिर होना चाहिए और फिर भी यह स्थिर नहीं रह सकता । इसलिए कानून के बारे में सोचने वाले सभी लोगों ने स्थिरता की आवश्यकता और परिवर्तन की आवश्यकता की परस्पर विरोधी मांगों को सुलझाने के लिए संघर्ष किया है।

24) धारा 6, जैसा कि संशोधित है, यह निर्धारित करती है कि संशोधित अधिनियम, 2005 के प्रारंभ से, एक सहदायिक की बेटी जन्म से ही बेटे की तरह ही अपने आप में एक सहदायिक बन जाएगी। यह स्पष्ट है कि पुरानी धारा और पुराने हिंदू कानून के तहत बेटों को जन्म से ही सहदायिक माना जाता था। संशोधित प्रावधान अब वैधानिक रूप से जन्म से ही बेटियों के भी सहदायिक के अधिकारों को मान्यता देता है। यह अनुभाग पुत्र के समान ही शब्दों का प्रयोग करता है। इसलिए यह स्पष्ट होना चाहिए कि सहदायिक के बेटे और बेटियों दोनों को जन्म से सहदायिक बनने का अधिकार दिया गया है। सहदायिक में जन्म का तथ्य ही सहदायिक का निर्माण करता है, इसलिए सहदायिक के बेटे और बेटियां जन्म के आधार पर सहदायिक बन जाते हैं। सहदायिक संपत्ति का हस्तांतरण बाद का चरण है और सहदायिक की मृत्यु का परिणाम है। जैसा कि ऊपर बताया गया है, सहदायिकता का पहला चरण स्पष्ट रूप से इसका निर्माण है, और जैसा कि अच्छी तरह से मान्यता प्राप्त है। सहदायिकता की घटनाओं में से एक सहदायिक का दर्जा विच्छेद की मांग करने का अधिकार है। इसलिए, सहदायिकों के अधिकार जन्म से (अब बेटियों सहित) उत्पन्न होते हैं और प्रवाहित होते हैं, जैसा कि उप–एस (1) (ए) और (बी) से स्पष्ट है।

25) **भारतीय स्टेट बैंक बनाम घमंडी राम** एआईआर 1969 एससी 1330 के मामले में इस न्यायालय के निर्णय का संदर्भ, सहदायिकता की घटनाओं को समझने के लिए आवश्यक है जैसा कि हमेशा हिंदू मिताक्षरा सहदायिकी में विरासत में मिला था:

> ''मिताक्षरा स्कूल ऑफ हिंदू लॉ के अनुसार एक हिंदू संयुक्त परिवार की सभी संपत्ति अर्ध–कॉर्पोरेट क्षमता में सभी सहदायिकों के पास सामूहिक स्वामित्व में होती है। मिताक्षरा का पाठ्य प्राधिकार स्पष्ट शब्दों में बताता है कि संयुक्त परिवार की संपत्ति संयुक्त परिवार के जीवित रहने वाले और उसके बाद पैदा होने वाले सदस्यों के लिए ट्रस्ट में रखी जाती है (देखें मिताक्षरा, अध्याय पृष्ठ 1 1–27) मिताक्षरा कानून के तहत सहदायिकी की घटनाएं इस प्रकार हैं: **पहले**, किसी व्यक्ति के तीसरी पीढ़ी तक के वंशज पुरुष, पैतृक संपत्तियों में जन्म के आधार पर स्वामित्व हासिल कर लेते हैं, यह आम बात है; **दूसरे,** ऐसे वंशज किसी भी समय बँटवारा माँगकर अपने अधिकारों का प्रयोग

कर सकते हैं; **तीसरा**, विभाजन तक प्रत्येक सदस्य को शेष के साथ–साथ पूरी संपत्ति पर स्वामित्व प्राप्त है; **चौथा**, इस तरह के सह–स्वामित्व के परिणामस्वरूप संपत्तियों का कब्जा और आनंद आम है; **पाँचवाँ**, कि संपत्ति का कोई भी हस्तांतरण तब तक संभव नहीं है जब तक कि यह आवश्यक न हो, सहदायिकों की सहमति के बिना, और **छठा**, कि एक मृत सदस्य का हित उसकी मृत्यु पर जीवित बचे लोगों को मिल जाता है।''

26) अत: यह स्पष्ट है कि विभाजन का अधिकार निरस्त नहीं किया गया है। यह अधिकार अंतर्निहित है और कोई भी सहदायिक इसका लाभ उठा सकता है, यहां तक कि एक बेटी भी जो सहदायिक है।

27) वर्तमान मामले में, निस्संदेह, विभाजन का मुकदमा वर्ष 2002 में दायर किया गया था। हालाँकि, इस मुकदमे के लंबित रहने के दौरान, अधिनियम की **धारा 6** में संशोधन किया गया था जबकि विचारण न्यायालय द्वारा वर्ष 2007 में ही डिक्री पारित की गई थी। इस प्रकार, अपीलार्थीगणओं के अधिकार वर्ष 2005 में स्पष्ट हो गए और इस घटना को विचारण न्यायालय के साथ–साथ उच्च न्यायालय द्वारा भी ध्यान में रखा जाना चाहिए था। इस न्यायालय ने **गंडुरी कोटेश्वरम्मा एवं अन्य बनाम चकिरी यानादी और अन्य (2011) 9 एससीसी 788** में यह अभिनिर्धारित किया है कि संशोधित धारा 6 के अनुसार सहदायिक संपत्ति में बेटियों के अधिकार केवल केवल इसलिए खतम नहीं होता क्योंकि विभाजन के मुकदमे में प्रारंभिक डिक्री पारित कर दी गई है। जहां तक विभाजन के मुकदमों का प्रश्न है, अंतिम डिक्री पारित होने पर ही विभाजन अंतिम होता है। जहां ऐसी स्थिति उत्पन्न होती है, वहां 2005 के संशोधन द्वारा कानून में बदलाव को ध्यान में रखते हुए प्रारंभिक डिक्री में संशोधन करना होगा।

28) तथ्यों के आधार पर, इसमें कोई विवाद नहीं है कि जो संपत्ति विभाजन के मुकदमे का विषय थी, वह संयुक्त परिवार की है और गुरुलिंगप्पा सावदी उक्त संयुक्त परिवार की संपत्ति के प्रस्तावक थे। हमारी उपरोक्त चर्चा के मद्देनजर, उक्त विभाजन मुकदमे में, हिस्सा अपीलार्थीगण को भी हस्तांतरित किया जाएगा। चूंकि, सावदी मृत्यु पश्चात् अपने पीछे दो बेटों, दो बेटियों और एक विधवा को छोड़ गये इसलिए उक्त संपत्ति में दोनों अपीलार्थीगण प्रत्येक 1/5 वें हिस्से के हकदार होंगे। वादी (उत्तरवादी क्र.–1), अरुण कुमार (प्रतिवादी क्र. 1) का पुत्र है। चूंकि, अरुण कुमार के पास 1/5 हिस्सा होगा, इसलिए विभाजन मे इसे पांच शेयरों में विभाजित किया जाएगा यानी प्रतिवादी नंबर 1 अरुण कुमार, उसकी पत्नी प्रतिवादी क्र.– 2, उसकी दो बेटियां प्रतिवादी नंबर 3 और 4 एवं बेटा वादी / प्रतिवादी क्र.– 1 (उत्तरवादी क्र. – 1) के बीच । इस प्रकार वादी/प्रतिवादी क्र.– 1 संपत्ति में 1/25 वें हिस्से का हकदार होगा।

29) अपीलें उपरोक्त अनुसार स्वीकार की जाती हैं एवं विभाजन की डिक्री विचारण न्यायालय द्वारा तदनुसार तैयार की जाएगी। व्यय के लिए कोई आदेश नहीं।